RESEARCH FRONT

ISSN
(Print) 2320 – 6446, (Online) 2320 – 8341
Impact Factor – 1.115

बुद्ध प्रणीत आर्थिक नीतियों में जनकल्याण

डॉ. शिव कुमार
व्यवहारिक अर्थशास्त्र विभाग,
लखनऊ विश्वविद्यालय, लखनऊ

संक्षिप्त–सार

बौद्ध धर्म में आर्थिक संक्रियाओं को जन कल्याण के सन्दर्भ में विवेचित किया गया है, और जनकल्याण के लक्ष्य के साथ ही सभी आर्थिक गतिविधियों के नियम बनाये गये हैं। बौद्ध धर्म में कर्म को दुःख की उत्पत्ति का प्रधान कारण माना गया है। तथागत ने अन्तःशुद्धि और सम्यक् कर्म के ऊपर जोर देकर समाज में नैतिक आदर्शवाद की स्थापना पर बल दिया है। बुद्ध के मार्ग में बाह्य आचरण की शुद्धि और मानसिक अभ्यास दोनों पर बल था, किन्तु आचरण–शुद्धि को अत्यन्त आवश्यक माना गया है। इसी प्रकार बार–बार आत्मनिर्भरता और सत्य के स्वयं साक्षात्कार पर बल दिया गया है।

बुद्ध की अहिंसात्मक की नीति ने पशुधन रक्षा में महत्त्वपूर्ण योगदान दिया। क्योंकि ग्रामीण अर्थव्यवस्था की रीढ़ कृषि में पशु–धन बहुत ही महत्त्वपूर्ण अंग होते हैं, अतः इस नीति से ग्रामीण अर्थव्यवस्था सुदृढ़ हुई। इसी प्रकार समुदी यात्रा पर लगे निषेध का विरोध करते हुए सम्पूर्ण विश्व के साथ मधुर सम्बन्ध बनाने पर बल दिया गया, जिससे विभिन्न देशों के साथ भारत के आर्थिक सम्बन्ध बने और वाणिज्य–व्यापार में प्रगति हुई। बौद्ध धर्म में सत्कर्म को अत्यधिक महत्व दिया गया और सभी आर्थिक क्रियाओं में भी जनकल्याण की भावना से सत्कर्म करने की शिक्षा दी गयी है।

बौद्ध दर्शन में आर्थिक सिद्धान्तों को मानव हित के तीन मुख्य तत्त्वों– मानव, समाज एवं प्राकृतिक पर्यावरण के परिप्रेक्ष्य में निर्देशित किया गया है। आर्थिक क्रियाओं को इस प्रकार सम्पन्न करने पर बल दिया गया है जिससे इन तीनों तत्त्वों पर कोई विपरीत प्रभाव न पड़े। इस प्रकार बुद्ध द्वारा प्रतिपादित आर्थिक नीतियाँ विश्व बन्धुत्व एवं जनकल्याण की भावना से अभिप्रेत हैं और इनकी वर्तमान परिप्रेक्ष्य में महती आवश्यकता है।

कुंजी शब्द : जनकल्याण, ग्रामीण अर्थव्यवस्था, आर्थिक नीति, विश्व बन्धुत्व, धन।

आर्थिक साध्य – गरीबी की समाप्ति

बुद्ध के नीतिशास्त्र का आर्थिक साध्य केवल उचित एवं अनुचित साधनों से धन अर्जित करके पूंजीपति बनना नहीं है। बुद्ध धन को साधन के रूप में मानते थे। उसका कारण यह था कि धन के अभाव में मनुष्य के जीवन में दुःखों में वृद्धि हो जाती है और दुःखों के कारण जिन साध्यों की प्राप्ति करनी चाहिए, उनकी प्राप्ति नहीं हो पाती। ''बुद्ध को दरिद्रता पसंद नहीं थी।''[1] इसके साथ ही ''उन्हें (धन) संग्रह–वृत्ति भी नापसंद थी।''[2] इससे मनुष्य में तृष्णा, लोभ और मोह का उत्पादन होता है, जिसके कारण वह अपने कुशल मार्ग से भटक कर, अकुशल मार्ग पर आरूढ़ हो जाता है। इससे उसके जीवन में दुःखों में अत्यधिक वृद्धि होती है और निर्वाण के मार्ग से दूर हटता चला जाता है।

बुद्ध ''भूख को सबसे बड़ा रोग मानते थे।[3] उसका कारण यह है कि भूख से शरीर में अनेक रोग उत्पन्न हो जाते हैं। उन्होंने तपस्या के समय भूखा रहकर अपने शरीर को जर–जर कर लिया था, फिर भी उन्हें अपने साध्य की प्राप्ति नहीं हुई। भूख से अनेक मानसिक और शारीरिक समस्याएं उत्पन्न हो जाती हैं, इसलिए इस संदर्भ में बुद्ध ने कहा, ''निरोग रहना परम लाभ है।''[4]

---

[1] अम्बेडकर, बी. आर., अनु. भदन्त आनन्द कौसल्यायन, भगवान् बुद्ध और उनका धर्म, पांचवां सं., बम्बई (1991), पृ. 458
[2] अम्बेडकर, बी. आर., अनु. भदन्त आनन्द कौसल्यायन, भगवान् बुद्ध और उनका धर्म, पांचवां सं., बम्बई (1991), पृ. 459
[3] ''जिघच्छा परमारोगा...।''धम्मपदं 7 सुख वग्गो
[4] ''अरोग्यापरमा लाभा...।'' धम्मपदं 8

ISSN
(Print) 2320 – 6446, (Online) 2320 – 8341
Impact Factor – 1.115

बुद्ध के द्वारा महामंगल सुत्त में ''शिल्प सीखने''[5] के लिए गृहस्थ उपासकों को उपदेश दिया है, जिससे वे परिश्रम और अच्छे साधन से सम्पत्ति अर्जित करके ''अपने माता–पिता की सेवा और पुत्र–पुत्री का पालन–पोषण कर सकें।''[6] तथागत गौतम बुद्ध के द्वारा चोरी से कमाए हुए धन को पाप कर्म कहा गया है। इसलिए उन्होंने पंचशील के द्वितीय शील में 'चोरी' से विरत रहने के लिए व्यवस्था दी है। गृहस्थ धर्म के बारे में बुद्ध बताते हुए कहते हैं, ''तब दूसरे की समझी जाने वाली किसी चीज को चुराना त्याग दें, न चुराये और न चुराने की अनुमति दे। सब प्रकार की चोरी का त्याग कर दे।[7] इस प्रकार चोरी करने को त्याग कर मनुष्य परिश्रम के साथ धन अर्जित करते हैं, तो उससे उनका और समाज में सभी लोगों का कल्याण होता है।

एक बार अनाथपिण्डिक जहां थतागत बुद्ध थे, वहां आया, अभिवादन किया और एक ओर बैठ गया। अनाथपिण्डिक यह जानना चाहता था कि गृहस्थ किस प्रकार सुखी रह सकता है? तदनुसार उसने तथागत बुद्ध से प्रार्थना की, ''भगवान्! मुझे गृहस्थ जीवन के सुख का रहस्य समझाने की कृपा करें।''

बुद्ध ने अनाथपिण्डिक को समझाते हुए कहा, ''अनाथपिण्डिक! गृहस्थ का पहला सुख सम्पत्ति का मालिक होना होता है। एक गृहस्थ के पास धार्मिक तरीके से, न्यायतः बड़े परिश्रम से, बाहुबल से, पसीना बहाकर, कमाया हुआ धन होता है। इस विचार से कि मेरे पास न्यायतः अर्जित धन है, उसे प्रसन्नता होती है।''[8]

''अनाथपिण्डिक! दूसरा सुख सम्पत्ति भोगने का सुख है। एक गृहस्थ के पास धार्मिक तरीके से, न्यायतः बड़े परिश्रम से, बाहुबल से, पसीना बहाकर, कमाया हुआ धन होता है। वह अपने धन का उपयोग करता है और पुण्य–कर्म करता है। इस विचार से कि मैं अपने न्यायतः अर्जित धन से पुण्य–कर्म करता हूँ, उसे प्रसन्नता होती है।''[9]

''अनाथपिण्डिक! तीसरा सुख 'ऋण–ग्रस्त' न होने का है। एक गृहस्थ के सिर पर किसी का कम या ज्यादा 'ऋण' नहीं होता, उसे प्रसन्नता होती है।''[10]

''अनाथपिण्डिक! चौथा सुख दोषरहित होने का है। एक गृहस्थ के शारीरिक कर्म निर्दोष होते हैं, वाणी के कर्म निर्दोष होते हैं और मन के कर्म निर्दोष होते हैं। उसे निर्दोषता का सुख प्राप्ता होता है।''[11]

शारीरिक सदाचार के बारे में तथागत बुद्ध कहते हैं, ''वह जो चोरी का त्याग करता है, वह दूसरों की किसी चीज को ग्रहण नहीं करता, जो उसे न दी गई है, वह ईमानदारी का जीवन व्यतीत करता है।''[12]

आर्थिक साध्य की प्राप्ति के लिए सम्पत्ति को नष्ट होने से बचाना परमावश्यक है। यदि मनुष्य सम्पत्ति को बर्बाद करता है तो किस प्रकार मनुष्य और समाज को आर्थिक साध्यों की प्राप्ति होती ? इसलिए तथागत बुद्ध ने बड़ी ही तीक्ष्ण दृष्टि से चिन्तन और मनन करके बताया है कि सम्पत्ति के बर्बाद करने के छः कारण होते हैं, मनुष्य को उनसे बचना चाहिए।

---

[5] सुत्त निपात.,4 महामंगल सुत्त, सं. अनु. भिक्षु धर्मरक्षित, मोतीलाल बनारसी दास पब्लिशर्स, दिल्ली (1988)
[6] सुत्त निपात.,5 महामंगल सुत्त, सं. अनु. भिक्षु धर्मरक्षित, मोतीलाल बनारसी दास पब्लिशर्स, दिल्ली (1988)
[7] सुत्त निपात.,2/14/20 धम्मिक सुत्त, सं. अनु. भिक्षु धर्मरक्षित, मोतीलाल बनारसी दास पब्लिशर्स, दिल्ली (1988)
[8] अम्बेडकर, बी. आर., अनु. भदन्त आनन्द कौसल्यायन, भगवान् बुद्ध और उनका धर्म, पांचवां सं., बम्बई (1991), पृ. 298

[9] अम्बेडकर, बी. आर., अनु. भदन्त आनन्द कौसल्यायन, भगवान् बुद्ध और उनका धर्म, पांचवां सं., बम्बई (1991), पृ. 298
[10] अम्बेडकर, बी. आर., अनु. भदन्त आनन्द कौसल्यायन, भगवान् बुद्ध और उनका धर्म, पांचवां सं., बम्बई (1991), पृ. 298

[11] अम्बेडकर, बी. आर., अनु. भदन्त आनन्द कौसल्यायन, भगवान् बुद्ध और उनका धर्म, पांचवां सं., बम्बई (1991), पृ. 298
[12] अम्बेडकर, बी. आर., अनु. भदन्त आनन्द कौसल्यायन, भगवान् बुद्ध और उनका धर्म, पांचवां सं., बम्बई (1991), पृ. 308

ISSN
(Print) 2320 – 6446, (Online) 2320 – 8341
Impact Factor – 1.115

''कौन से छः भोगों के अपायमुख (=विनाश के कारण) हैं– (1) शराब, नशा आदि का सेवन...। (2) विकाल (=संध्या) में चौरास्ते की सैर (=विसिखा–चरिया) में तत्पर होना...। (3) समज्या (=समाज=नाच–तमाशा) का सेवन...। (4) जुआ (और दूसरी) दिमाग बिगाड़ने की चीजें...। (5) बुरे मित्र (=पप्प–मित्र) की मिताई...। (6) आलस्य में फंसना...।''[13]

(1) नशा– ''ग्रहपति–पुत्र! शराब–नशा आदि के सेवन में छः दुष्परिणाम हैं– (1) तत्काल धन की हानि होना। (2) कलह का बढ़ना। (3) यह रोगों का घर है। (4) अयश उत्पन्न करने वाला। (5) लज्जा का नाश करने वाला। (6) बुद्धि (=प्रज्ञा) को दुर्बल करता है।''[14]

(2) चौरास्ते की सैर– ''ग्रहपति–पुत्र! विकाल में चौराहे की सैर से छः दुष्परिणाम हैं– (1) स्वयं भी वह अ–गुप्त=अ–रक्षित होता है। (2) उसके स्त्री–पुत्र भी अ–गुप्त=अ–रक्षित होते हैं। (3) उसकी धन सम्पत्ति भी अ–गुप्त=अ–रक्षित होती है। (4) बुरी बातों की शंका होती है। (5) झूठी बात उस पर लागू होती है। (6) वह बहुत से दुःख कारक कर्मों को करने वाला होता है।''[15]

(3) नाच–तमाशा– ''ग्रहपति–पुत्र! समज्याभिच्चरण में छः दोष हैं– (1) (आज) कहां नाच है (इसकी परेशानी)? (2) कहां गीत है? (3) कहां वाद्य है? (4) कहां आख्यान है? (5) कहां पाणिस्वर (=हाथ से ताली देकर नृत्यगीत) है? (6) कहां कुम्भ–थूण (=वादन विशेष) है?''[16]

(4) जुआ– ''ग्रहपति–पुत्र! द्यूत–प्रमादस्थान के व्यसन के छः दोष हैं– (1) जय (होने पर) वैर उत्पन्न करता है। (2) पराजित होने पर (हारे) धन की सोचता है। (3) तत्काल धन का नुकसान, (4) सभा में जाने पर (उसके) वचन का विश्वास नहीं रहता। (5) मित्रों और अमात्यों द्वारा तिरस्कार। (6) शादी–विवाह करने वाले – यह जुआरी आदमी है, स्त्री का भरण पोषण नहीं कर सकता। –सोच (कन्या देने में) आपत्ति करते हैं।''[17]

(5) दुष्ट की मिताई– ''ग्रहपति–पुत्र! दुष्ट दोस्त की मिताई के छः दोष हैं– (1) धूर्त, (2) शौण्ड, (3) पियक्कड़ (=पिपासु), (4) कृतघ्न, (5) वंचक, और (6) गुण्ड (=साहसिक, खूनी) होते हैं, वही इसके मित्र होते हैं।''[18]

(6) आलस्य– ''ग्रहपति–पुत्र! आलस्य में पड़ने में छः दोष हैं– (1) बहुत ठंड है काम नहीं करता। (2) बहुत गर्मी है काम नहीं करता। (3) बहुत शाम हो गई है काम नहीं करता। (4) बहुत सबेरा है काम नहीं करता। (5) बहुत बहुत भूखा हूँ काम नहीं करता। (6) बहुत बहुत खाये हूँ काम नहीं करता। इस प्रकार से करणीय बातों के न करने से... अनुत्पन्न भोग उत्पन्न नहीं होते और उत्पन्न भोग नष्ट हो जाते हैं।''[19] इस प्रकार आर्थिक साध्यों की प्राप्ति में व्यवधान उत्पन्न हो जाता है।

तथागत बुद्ध उच्चकोटि के मनोवैज्ञानिक थे, इसलिए उन्होंने बड़े परिश्रम, बाहुबल, धार्मिक तरीके से, न्यायतः और पसीना बहाकर अच्छे एवं पुण्य साधनों से धन अर्जित करने के लिए कहा, क्योंकि वह इस मानसिकता से भली प्रकार अवगत थे कि बुरे और पापयुक्त साधनों से कमाया गया धन व्यक्ति को दुराचारी; जैसे– शराबी, जुआरी, झूठ बोलने वाला, हत्या करने वाला, वेश्यागामी एवं परस्त्रीगमनकारी बना देता है। इसलिए बुद्ध ने अच्छे साधनों से धन अर्जित करने का उपदेश दिया। अच्छे साधनों से धन अर्जित करने वाला व्यक्ति अपनी कमाई हुई सम्पत्ति को अच्छे, धार्मिक एवं पुण्य कार्यों में लगाता है। इससे उसका पतन नहीं होता और वह पुण्य एवं धार्मिक कर्म करते हुए जीवन के साध्यों की ओर अग्रसर हो सकता है।

---

[13] 440
[14] 441
[15] 442
[16] 443
[17] 444
[18] 445
[19] 446

ISSN
(Print) 2320 – 6446, (Online) 2320 – 8341
Impact Factor – 1.115

बुद्ध इस आर्थिक व्यवस्था से भलीभांति परिचित थे कि मनुष्य की आर्थिक कमजोरियां एवं आर्थिक दबाव सभी पकार के पाप अनैतिक व अकुशल कर्म करने के लिए बाध्य करते हैं। इसलिए उन्हें कहना पड़ा कि ''निर्धनता सभी पापों की जननी होती है।''[20] इसी सन्दर्भ में एक फिल्म के गीत की पंक्ति भी प्रचलित है, ''भरा है पेट तो संसार जगमगाता है, सताए भूख तो ईमान डगमगाता है।''

चक्रवर्ती राजा ने अपने मंत्रियों, सभासदों, कोषाध्यक्ष, महामंत्री, अधीनस्थ(सेनापति), द्वारपाल और वे जो विद्या के बल से अपनी जीविका चलाते थे, सभी को राजा ने पूछा, तो उन सभी ने उत्तर दिया, ''देव! आपने अपनी ही बुद्धि से राज करने के कारण आपका राज्य वैसा उन्नति नहीं कर रहा, जैसा कि पहले चक्रवर्ती–व्रत पालन करने वाले राजाओं का। देव! आपके राज्य में अमात्य, सभासद...आदि हम लोग, और जो दूसरे लोग हैं सभी चक्रवर्ती–व्रत धारण करें। देव! आप हम लोगों से आर्य चक्रवर्ती–व्रत पूछें। आपके आर्य चक्रवर्ती–व्रत पूछने पर हम लोग बताएंगे कि निर्धनता सभी पापों की जननी होती है।''[21]

''भिक्षुओं! तब राजा ने अमात्यों आदि को बुला कर उनसे आर्य चक्रवर्ती–व्रत पूछा। राजा के पूछने पर उन लोगों ने उन्हें सब कुछ बताया। उसे सुनकर उसने धार्मिक बातों को सुनकर उनकी रक्षा का प्रबन्ध तो कर दिया, किन्तु निर्धनों को धन नहीं दिया। उससे उरिद्रता बहुत बढ़ गई। उससे एक मनुष्य दूसरे की चीज चोरी करने लगा।''[22]

''भिक्षुओं! ऐसा कहने पर राजा ने उस पुरुष को बोला, ''क्या तुमने दूसरों की चीज चुराई है?'' ''हां देव! सचमुच!'' राजा ने पुनः पूछा, ''किस कारण से?'' ''देव! रोजी नहीं चलती थी।'' तब राजा ने उस पुरुष को धन दिलवाया और कहा, ''हे पुरुष ! इस धन से तुम अपनी रोजी चलाओ। माता–पिता को पालो, पुत्र और पत्नी को पोशो, अपने कारोबार को चलाओ। लौकिक और पारलौकिक सुख के लिए श्रमणों को दान दो।''[23]

'गरीबी में आटा गीला' नामक लोकोक्ति प्रसिद्ध है। इसका तात्पर्य है कि गरीबी में व्यक्ति अपना पेट भरने और जरूरतों को पूरा करने के लिए प्रत्येक पाप–कर्म कर सकता है। आजकल देखा गया है कि धन की प्राप्ति के लिए सुपारी लेकर लोगों की हत्या करते हैं और अपहरण भी धन के लिए किये जा रहे हैं। चोरी, डकैती, जेबकतरी और उठाईगीरी धन की प्राप्ति के लिए करते हैं। आज वेश्यावृत्ति, कॉलगर्ल, और दुराचार का धन्धा जोरों पर है। कुछ लोग देह–व्यापार को मसाज सेन्टर और व्यूटीपार्लर की आड़ में चलाते हैं। इस धन्धे में आराम से काफी धन की आय होती है और कोई टैक्स भी नहीं देना पड़ता है। धन की प्राप्ति के लिए लोग किसी भी प्रकार का कितना ही झूठ बोलने के लिए तत्पर रहते हैं। आजकल जायज और नाजायज शराब और नशों के धन्धे में अकूत सम्पत्ति कमाई जा रही है। ये सब पाप कर्म अधिकांशतः गरीबी के कारण होते हैं।

इन्हीं सब बातों को देख बुद्ध ने इस प्रकार कहा, ''भिक्षुओं! इस तरह, निर्धनों को धन न दिये जाने पर दरिद्रता बहुत बढ़ जाती है। उससे चोरी होती है। उससे हथियार बढ़ जाते हैं। हथियारों से खून–खराबा बढ़ता है।''[24] ''भिक्षुओं! इस तरह निर्धनों को धन न दिये जाने से झूठ बोलना पड़ता है, चुगली खानी पड़ती है।''[25] बुद्ध कहते हैं, ''भिक्षुओं! इस तरह निर्धनों को धन न दिये जाने से स्त्रियां दुराचार एवं व्यभिचार करने लगती हैं।''[26] तथागत बुद्ध पुनः कहते हैं, ''भिक्षुओं! निर्धनों को धन न दिये

[20] 447
[21] 448
[22] 449
[23] 450
[24] 451
[25] 452
[26] 453

ISSN
(Print) 2320 – 6446, (Online) 2320 – 8341
Impact Factor – 1.115

जाने से हिंसा का भाव बढ़ जाता है।''[27] तथागत बुद्ध ने कहा, ''भिक्षुओं! निर्धनों को धन न दिये जाने से लोगों में अधर्म में राग, अनुचित लोभ और मिथ्या धर्म उत्पन्न हो जाते हैं।'' जो उनके पतन का मुख्य कारण होते हैं।

तथागत बुद्ध के उपर्युक्त कथनों से यह स्पष्ट हो जाता है कि बुद्ध निर्धनता को सभी बुराइयों की जड़ समझते थे। उनके धर्म का आर्थिक साध्य निर्धनता को समाप्त करना, जिससे भूख के कारण कोई भी व्यक्ति हत्या, चोरी, व्यभिचार, झूठ बोलना और नशाखोरी की ओर उन्मुख न हो सके। यथार्थ में बुद्ध के सिद्धान्त को आर्थिक दृष्टि से आज की भाषा में समाजवाद के नाम से पुकारा जा सकता है।

सामान्यतः देखा गया है कि जहां धन का बाहुल्य होता है, वहां नैतिक मूल्यों में शिथिलता एवं धुंधलापन आ जाता है। हिन्दू धर्म के नीतिशास्त्र के अनुसार धर्म, अर्थ, काम, मोक्ष मानव–जीवन के साध्य होने चाहिए। मनुष्य का नैतिक जीवन तभी सम्भव हो सकता है, जब वह इन चारों साध्यों के लिए सम्यक् दृष्टि रखता हुआ उनका अनुशीलन करता है। यदि मनुष्य इन चारों में से किसी एक साध्य पर अधिक बल देता है, उस अवस्था में वह नैतिक जीवन व्यतीत नहीं कर सकता।

हिन्दी भाषा में यह लोकोक्ति प्रसिद्ध है कि लक्ष्मी और सरस्वती में वैर होता है। किसी हद तक यह लोकोक्ति ठीक प्रतीत होती है। मनुष्य का भौतिक शरीर नैतिक एवं मानवीय मूल्यों की ओर अग्रसर होने के लिए साधन होता है। यदि शरीर ही असहाय और शक्तिहीन हो गया, तो वह साध्यों की ओर किस प्रकार अग्रसर हो सकता है? तपस्या करते समय सिद्धार्थ का शरीर इतना जर–जर हो गया था कि वह खड़े भी नहीं हो सकते थे। सुजाता की खीर खाने के बाद उनके शरीर में ऊर्जा उत्पन्न हुई, फिर उन्हें अपने साध्य की प्राप्ति हुई।

धन के अभाव में व्यक्ति मृत्यु को प्राप्त हो जाता है। इसलिए बुद्ध को कहना पड़ा, ''भूख सबसे बड़ा रोग है।''[28] इसी क्रम में बुद्ध ने कहा, ''निरोग होना परम लाभ है।''[29]

निष्कर्ष

संसार के लोग जिन प्रमुख कारणो से दुखी हैं उनमें एक कारण 'भूख' है महामानव बुद्ध ने 'धम्मपद' में भूख को सबसे बड़ा रोग बताया है। इस बड़े रोग की दवा 'रोटी' है। उसके बिना कोई भी प्राणी जीवित नही रह सकता भोजन जीवन का आधार है। कदाचित् संसार में महामानव बुद्ध पहले अर्थशास्त्री थे जिन्होंने रोटी को अर्थशास्त्र से जोड़ा और भोजन को मनुष्य की पहली आवश्यकता बताया।

सन्दर्भ ग्रन्थ सूची

1. अम्बेडकर, बी. आर., अनु. भदन्त आनन्द कौसल्यायन, भगवान् बुद्ध और उनका धर्म, पांचवां सं., बम्बई (1991)
2. ''जिघच्छा परमारोगा... ।''धम्मपदं 7 सुख वग्गो
3. ''अरोग्यापरमा लाभा... ।'' धम्मपदं 8
4. सुत्त निपात.,4 महामंगल सुत्त, सं. अनु. भिक्षु धर्मरक्षित, मोतीलाल बनारसी दास पब्लिशर्स, दिल्ली (1988)
5. सुत्त निपात.,5 महामंगल सुत्त, सं. अनु. भिक्षु धर्मरक्षित, मोतीलाल बनारसी दास पब्लिशर्स, दिल्ली (1988)
6. सुत्त निपात.,2/14/20 धम्मिक सुत्त, सं. अनु. भिक्षु धर्मरक्षित, मोतीलाल बनारसी दास पब्लिशर्स, दिल्ली (1988)

[27] 454
[28] 45
[29] 46

ISSN
(Print) 2320 – 6446, (Online) 2320 – 8341
Impact Factor – 1.115

7. डॉ. ऑगने लाल, "बौद्ध संस्कृति के विविध आयाम", मानव संसाधन विकास मन्त्रालय भारत सरकार (2008).
8. डॉ. सर्वपल्ली राधाकृष्णन, "गौतम बुद्ध जीवन और दर्शन", राजपाल एण्ड संन्स दिल्ली (2012)
9. राहुल सांकृत्यायन, "बौद्ध दर्शन", किताब महल इलहाबाद, सस्करण (2013)
10. डॉ. सत्यनारायण दुबे, "बौद्ध एवं जैन धर्म तथा दर्शन ", विश्वविद्यालय प्रकाशन वाराणसी–संस्करण (2004)
11. पी. वी. बापट, "बौद्ध धर्म के 2500 वर्ष", प्रकाशन विभाग, सूचना और प्रसारण मत्रालय भारत सरकार (2010)
12. एम. एन. दास गुप्ता, "ए हिस्ट्री ऑफ इडियन फिलासफी",
13. सी. डी. शर्मा, "ए क्रिटिकल सर्वे ऑफ इंडियन फिलासफी"